International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 26-02-2023, Accepted: 11-03-2023, Published: 26-03-2023
Volume 9, Issue 2, 2023, Page No. 50-52

विष्णु प्रभाकर के नाटकों में मानवतावादी स्वर

डॉ. अनीता यादव
सह–आचार्य (हिंदी), राजकीय महाविद्यालय बूंदी, राजस्थान, भारत

सारांश
सत्य, त्याग, अहिंसा, समता, न्याय, वसुधैव कुटुंबकम ऐसे मूल्य हैं जो सर्वकालिक है। इन्हीं को आत्मसात करने से जीवन की सार्थकता सिद्ध होती है। जीवन की इन मूल्यों के बिना कल्पना संभव नहीं है। विश्व में प्रेम हो युद्ध न हो घृणा न हो। मनुष्य प्रेम का मार्ग अपनाएं यही विष्णु प्रभाकर की आकांक्षा रही। यही कारण है कि उनके नाटकों में सर्वत्र प्रेम, स्नेह, विश्वास, मानवता, दया श्रद्धा के जीत होती है। नाटकों में व्यक्ति टूटता है फिर जुड़ता है। लेकिन मनुष्यता और जीवन के प्रति उसके आस्था कम नहीं होती। विष्णु प्रभाकर के साहित्य का मूल स्वर मनुष्य की पहचान और हर प्रकार के शोषण से मुक्ति है। उनकी चिंता ही मनुष्य और उसके संबंधों की है।

मूल शब्दः मानवतावादी, समाजवादी, सत्य, त्याग, अहिंसा, न्याय

विष्णु प्रभाकर की जीवन दृष्टि एक प्रगतिशील मानवतावादी लेखक की रही है। मानवीय मूल्यों में उनकी अटूट आस्था है। मनुष्य के चरित्र चित्रण में उनकी लेखनी यथार्थ से जुड़ी रहती है किंतु आदर्श की उन्मुखता भी रहती है। मानव कल्याण के लिए जो श्रेष्ठ है वही विष्णु प्रभाकर को स्पृहणीय है।

विष्णु प्रभाकर के सृजन का मूल स्वर मनुष्य की पहचान और हर प्रकार के शोषण से मुक्ति है। विष्णु प्रभाकर समाजवादी हैं किंतु उनका समाजवाद राजनीतिक पृष्ठभूमि पर आधृत न होकर अपने सांस्कृतिक संदर्भ में उदात्त मानवता की खोज का ही दूसरा नाम है। उन्हें सर्वाधिक चिंता मनुष्य और उसके मानवीय संबंधों की है क्योंकि शेष सभी कुछ उसी के लिए है।

यह चराचर जगत एक ही चैतन्य तथ्य की अभिव्यक्ति अथवा एक ही शक्ति की सृष्टि है अतः ईश्वरऐक्य की परिकल्पना द्वारा मानव ऐक्य की भावना सहज सिद्ध हो जाती है। गांधी के मानवतावाद का यही आधार है।

विष्णु प्रभाकर भी प्रारंभ से ही गांधीजी से प्रभावित रहे। उनकी नीतियों में उनकी अटूट आस्था रही। विश्व में सर्वत्र प्रेम हो, भेद–भाव न हो, घृणा का नाश हो युद्ध न हो, ऐसे विष्णु प्रभाकर की आकांक्षा है। उनके नाटकों में सत्य, शांति, अहिंसा, त्याग, दया ममता, करुणा आदि मनोभावों का चित्रण है। उनकी अभिलाषा है कि मनुष्य घृणा को छोड़कर प्रेम का पथ अपनाएं और यही कारण है कि इनकी रचना में प्रेम और स्नेह, मानवता और दया, विश्वास और श्रद्धा की जीत होती है। व्यक्ति नाटकों में टूट कर भी जुड़ता है क्योंकि जिंदगी के प्रति मनुष्यता के प्रति उसके आस्था समाप्त नहीं होती। यही विष्णु प्रभाकर की एक श्रेष्ठ उपलब्धि है। उनके पात्र जीवन से हार नहीं मानते, जीवन के प्रति आस्थाहीन नहीं बनते, यह शायद इसलिए भी है क्योंकि उनका खुद का विश्वास मनुष्य की शक्ति में, व्यक्ति के विकास में मानवता के उत्थान में अडिग है। विष्णु प्रभाकर ने अपने नाटकों में मानवतावादी स्वरों को अभिव्यक्ति दी है यथा सत्य, त्याग, अहिंसा, समता, न्याय, वसुधैव कुटुंबकम आदि।

सत्य

भारतीय समाज में सत्य को जीवन और जगत का मूलाधार माना जाता है अतः नाटकों में भी इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। सत्य के सहारे ही मनुष्य अपने जीवन को सार्थक बना सकता है। सत्य ही सभी सफलताओं का सबसे सबल माध्यम है। जीवन में सत्य की विजय पर गांधी जी का अटूट विश्वास रहा। सत्य से ऊपर उन्होंने केवल ईश्वर की सत्ता को स्वीकार किया। श्री के. सी. हेलन के विचार में गांधी जी ने शास्त्रों में उल्लिखित इस सत्य को अपनाया – 'सत्यम ब्रूयात, प्रियं ब्रूयात, मा ब्रूयात सत्यमप्रियम।'(1)

विष्णु प्रभाकर ने भी अपने नाटकों में सत्य का स्वर गुंजरित किया तथा बताया जीवन में सत्य का महत्त्व अक्षुण्ण है। विष्णु प्रभाकर के देवताओं का प्यारा, बा और बापू, वैष्णव जन पूर्णाहुति आदि नाटकों में सत्य का स्वर विद्यमान है। 'देवताओं का प्यारा' नाटक में राजकुमारी सम्राट अशोक के हिंसक कार्य की निंदा करती है। निसंकोच भाव से तब रानी कहती है कि तुम्हें यह सोचना चाहिए कि तुम सम्राट अशोक से बातें कर रही हो और बन्दिनी हो। तब राजकुमारी का कथन है देवी सत्य कहने के लिए कुछ नहीं सोचा जाता।(2)

'बा और बापू' में गांधी जी के सत्य अहिंसा सत्याग्रह सिद्धांतों का वर्णन है। गांधी जी के सत्य का मार्ग अत्यंत कठिन है लेकिन इसी सत्य की महिमा के कारण उनकी देशभर में प्रतिष्ठा है। गांधी जी के सत्य के संदर्भ में बा का कहना है ''वे अपने सत्य से सारे जगत में पूजे जाते हैं और मैं उनके कारण संसार में पूजी जाती हूं।''(3) वैष्णव जन में भी विष्णु प्रभाकर ने गांधी जी के सत्य की महत्ता प्रतिपादित की है। 'परमेश्वर सत्य है, यह कहने के बजाए सत्य ही परमेश्वर है यह कहना अधिक उपयुक्त है और सत्य परमेश्वर है तो धर्म में असत्य का स्थान नहीं हो सकता। पृथ्वी सत्य के बल पर टिकी हुई है। असत्य असत का अर्थ है नहीं सत सत्य अर्थात हैं।'(4) इसी प्रकार हत्या के बाद, सूरदास और होरी आदि नाटकों में भी सत्य का स्वर गुंजरित होता है।

त्याग

त्याग वृत्ति से मनुष्य में उदारता आती है। सिर्फ ग्रहण करने वाला व्यक्ति स्वार्थी तथा संकीर्ण हृदय का होता है किंतु संकीर्णता मनुष्य का लक्षण नहीं है। वह तो पशुता की पहचान है। त्याग की महिमा समझने वाले साम्राज्य के प्रति किंचित आसक्ति नहीं दिखाते। त्याग की भावना उत्पन्न हो जाने पर मनुष्य की सारी दुष्प्रवृतियां एक ही बार में समाप्त हो जाती हैं। किसी भी व्यक्ति, समाज, देश का गौरव, त्यागमयता के कारण ही बढ़ता है न की धन लोलुपता से। त्याग के मूल्य में आध्यात्मिक बल है जिसकी समता भौतिक शक्ति कभी नहीं कर सकती। विष्णु प्रभाकर के नाटकों में भी त्याग की भावना लक्षित होती है जैसे 'पूर्णाहुति' नाटक में कुमार की त्यागमयी वृत्ति देखने को मिलती है। वह अशोक की बहन संघमित्रा से प्रेम करता है लेकिन देश की

खातिर अपने प्रणय का भी त्याग कर देता है और संघमित्रा से भी उसी के लिए आह्वान करता है। 'वह कहता है संघमित्रा यदि तुम मुझसे सचमुच प्रेम करती हो तो समझ लो तुम्हारा प्रियतम कलिंग के रक्त यज्ञ में अपने रक्त की पूर्णाहुति देकर उसे संपूर्ण करना चाहता है और वह तुम्हें भी निमंत्रण देता है कि तुम भी इस यज्ञ में आहुति दो अपने प्रणय का बलिदान करो।'(5)

'बा और बापू में' बा की त्यागमयी वृत्ति देखने को मिलती है। उन्होंने अपने जीवन को गांधीजी के अनुसार मोड़ लिया वे कहती हैं 'मैंने समझ लिया कि आपका रास्ता अलग है। आपको साधु सन्यासी बनना है तब भला मैं मौज शौक में रहकर क्या करती आपका मन जानने के बाद मैंने भी अपना मन मोड़ लिया।'(6)

'देवताओं की घाटी' की सुधा अपने वतन की खातिर विवाह न करने की बात कहती है तो गौरी भी देश के लिए मर मिटने को तैयार है। इसी प्रकार दीवान हरदौल में हरदौल त्याग की प्रतिमा बन जाता है। मां के सतीत्व की रक्षा के लिए वह जुझारू सिंह द्वारा लगाए गए झूठ को साबित करने के लिए कहता है एक तो क्या लक्ष–लक्ष पुत्रों को भी बलिदान किया जा सकता है। 'मां तुम निशंक होकर भोजन परसों वीरों के जीवन में ऐसे अवसर बार–बार नहीं आते। जल्दी करो मां जल्दी कहीं शुभ मुहूर्त टल न जाए।' और अंत में प्राणांत कर लेता है।(7)

'केरल का क्रांतिकारी नाटक में वेलुतंपी दलवा और अम्मकुट्टी दोनों ही त्याग भावना से परिपूर्ण है। अम्मकुट्टी दलवा से प्रेम करती है लेकिन वह अपने प्यार को वेलुतंपी के मार्ग की बाधा नहीं बनने देती और वेलुतंपी के साथ मिलकर देश को फिरंगियों के हाथों से बचाने के लिए तत्पर हो जाती हैं। त्यागमयी वृत्ति नारी में पुरुषों की अपेक्षा अधिक होती है। जहां वें कोमल भावनाओं से युक्त है वही वह बड़े से बड़े त्याग के लिए भी उद्यत रहती है। 'डॉक्टर' में अनिला पति परित्यक्ता है पढ़ लिख कर डॉक्टर बनती है, नर्सिंग होम चलाती है और बाद में वही अपने पति की दूसरी बीमार पत्नी की सेवा सुश्रुषा करती है, बदला लेना चाहती है, लेकिन ले नहीं पाती न ही वह दूसरा विवाह करती है।

टहिंसा

गांधीजी के अनुसार अहिंसा का अर्थ है असीम प्रेम। अहिंसा प्रेम का प्रतिरूप है जो मानव को अन्याय के विरोध की प्रेरणा देता है परंतु शत्रु से विद्वेष रखकर नहीं, प्रेम व्यवहार द्वारा।

प्रेम का शुद्ध व्यापक स्वरूप अहिंसा है पर जिस प्रेम में राग या मोह की गंध आती हो वह अहिंसा नहीं हो सकता। गांधीजी के सिद्धांतों में हिंसा का प्रतिरोध हिंसा द्वारा न लेकर प्रेम पूर्वक शत्रु के हृदय परिवर्तन की आस्था में व्यक्त हुआ है। विष्णु प्रभाकर गांधीवादी थे। उनके नाटकों में भी अहिंसा भाव की अभिव्यक्ति है। उनके 'मैं भी मानव हूं', 'नवप्रभात', 'देवताओं का प्यारा', इतिहास और सत्य में हिंसा पर अहिंसा की विजय दिखाई है। हिंसा की व्यर्थता सिद्ध की है। विष्णु प्रभाकर प्रेम और अहिंसा को राष्ट्र उन्नति एवं विश्व कल्याण हेतु आवश्यक मानते हैं। नवप्रभात में अशोक उपगुप्त से कहता है – 'मैं मानव बन कर मानव को जीतना चाहता हूं, मैं कलिंग कुमार को बताना चाहता हूं कि मैं भी मानव हूं।' हृदय परिवर्तन के उपरांत सम्राट अशोक फिर कभी युद्ध न करने की प्रतिज्ञा करते हैं।(8)

'सूरदास' नाटक में अंधा सूरदास अहिंसा का पुजारी है। वह हिंसा नहीं चाहता। उसके मन में किसी के प्रति द्वेष भाव नहीं है। सूरदास का इंद्रदत्त भी अहिंसात्मक वृत्ति का परिचय देता हुआ गांव वालों को समझाता है की याद रखो तुम लोग न्याय की रक्षा करने आए हो बलवा नहीं हाथ मत उठाओ। हवलदार भी ब्राउन के कहने पर फायर नहीं करता और कहता है 'हुजूर को अख्तियार है जो चाहे करें लेकिन हम गोली नहीं चला सकते हम मनुष्य हैं हत्यारे नहीं। हमने अपने भाइयों का गला काटने के लिए नहीं उनकी रक्षा करने के लिए नौकरी की थी।' (9) विष्णु प्रभाकर युद्ध यानि हिंसा के पक्षधर नहीं हैं इसलिए उन्होंने अपने नाटकों में युद्ध की व्यर्थता और निरर्थकता चित्रित की है 'जैसे पांच रेखाएं एक बिंदु','सत्ता के आर पार सांखले', पॉच रेखाएं एक बिंदु का सत्यजीत युद्ध की निरर्थकता को व्यक्त करते हुए कहता है 'युद्ध सब कालों में परिस्थितियों में व्यर्थ है युद्ध घृणास्पद और भयानक हैं यह आत्मघाती युद्ध बंद होने चाहिए।'(10) इसी संदर्भ में 'सत्ता के आरपार' की महादेवी कहती है। 'युद्ध सर्वग्रासी होते हैं न जाने कितने निरपराध व्यक्तियों को व्यर्थ में ही प्राणों से हाथ धोना पड़ता है न जाने कितने व्यक्ति सत्ता की सर्वभक्षी भूख के कारण अनाथ और अपाहिज हो बैठते हैं।'(11) यह कथन नाटककार का युद्ध के प्रति घृणा भाव को प्रकट करता है। उनकी यही इच्छा है मनुष्य हिंसा और नफरत घृणा का मार्ग छोड़कर मोहब्बत का पथ अपनाएं। 'सांकले' में अजीत का कथन –'दुनिया में यह सब क्या है प्रेम नफरत, सभी प्यार ही क्यों नहीं करते और झगड़ते भी हैं तो सुलह क्यों नहीं कर लेते। (12) इस प्रकार विष्णु प्रभाकर की आकांक्षा है विश्व में प्रेम हो व्यक्ति–व्यक्ति के बीच भेद की दीवार न हो सब आपस में मेलजोल से रहें।

समता

विश्व शांति और अहिंसा हेतु समानता का होना नाटककार विष्णु प्रभाकर ने आवश्यक माना है। समता की भावना स्थापित करने के लिए व्यक्तियों के आपसी मतभेद और भेदभाव को समाप्त करना है। उसके लिए बलिदान और अथक परिश्रम की आवश्यकता है। विष्णु प्रभाकर वर्ग विहीन समाज की स्थापना चाहते हैं जहां न कोई ऊंचा हो और न कोई नीचा बल्कि सबको समान अधिकार समान अवसर प्राप्त हो। इसी समता के स्वर को विष्णु प्रभाकर ने अपने कई नाटकों में अभिव्यक्त किया है जैसे 'सब में एक प्राण' नाटक में सब समान है, ऊंच–नीच कुछ नहीं है इस संदर्भ में मैनेजर का कथन है 'आज से इस होटल में सब मनुष्य को खाने की अनुमति होगी सवर्णों को भी और अवर्णों को भी।'(13) 'कुम्हार की बेटी' में महाराजा द्वारा कहे गए इस कथन में समता का भाव अभिव्यक्त है, 'सुनो आचार्य तुमने अब तक जो कुछ किया उसका प्रायश्चित करो मेरे राज्य में सब स्त्री पुरुष समान है सबको समान अधिकार है'।(14) 'गांधीजी का सपना' नाटक में गांधी भक्त ऊंच–नीच की खाई पाटकर सबको समान रूप से देखना चाहता है। कहता है कि समता की बात समाज में तभी हो सकती है जबकि उच्च वर्ग अन्य को भी अपने समान समझे। 'अस्पृश्यता' नाटक में भी विष्णु प्रभाकर ने अवर्ण–सवर्ण के भेद को दूर कर समताबाद की स्थापना की है।

न्याय

विष्णु प्रभाकर के नाटकों में न्याय की भावना सर्वत्र विद्यमान है। उनके नाटकों के पात्र अन्याय का डटकर विरोध करते हैं भले ही उन्हें कितनी बाधाओं का सामना करना पड़े। न्याय की वृत्ति से व्यक्ति के चरित्र को बल मिलता है और वह समाज का गौरव स्तंभ बन जाता है। 'सूरदास' नाटक में अंधा सूरदास न्याय के लिए डटकर लड़ता है। नायकराम से उसका कथन है 'मेरी भूल थी कि तुम्हारे बल पर फुला हुआ था, यह उसी की सजा है। अब न्याय के बल पर लडूंगा और भगवान का ही भरोसा करूंगा अब तुम लोग मेरा साथ न दोगे, मत दो। जिधर न्याय है उधर किसी मदद की इतनी जरूरत भी नहीं है।' (15) कुहासा और किरण नाटक में अमूल्य सुनंदा प्रभा सभी अन्याय का डटकर विरोध करते हैं। न्याय की मांग करते हैं। 'सुनंदा मैं भी चीखूंगी हर उस अन्याय के विरुद्ध चीखूंगी, जिसे सहने के लिए हमें विवश किया जाता है। चलो मैं तुम्हारे साथ हूं।'(16) 'गंधार की भिक्षुणी' में आनंदी हूणों के अत्याचार से आक्रांत हो उनके द्वारा किए गए अन्याय का विरोध करती हुई सरदार मिहिरकुल की

हत्या कर अन्याय पर न्याय की विजय दिखाती है। इसी प्रकार 'होरी' में होरी नेक नीति पर चलने वाला है। दाता दीन जब उससे रुपए मांगता है। वह देने में समर्थ नहीं होता तो भी अपने बेटे गोबर से कहता है 'नीति हाथ से ना छोड़ना चाहिए। बेटा, अपनी करनी अपने साथ है, हमने जिस ब्याज पर रुपए लिए हैं वह तो देने ही पड़ेंगे फिर ब्राह्मण ठहरे इनका पैसा हमें पचेगा नहीं।'(17)

वसुधैव कुटुंबकम

भारतीय संस्कृति के अभ्युदय काल में ही वसुधैव कुटुंबकम भावना का जन्म हो गया था। यह ऐसी भावना है जिसमें देश, समाज संस्कृति का विरोध मिट जाता है और संपूर्ण विश्व कुटुंब बन जाता है। आधुनिक युग में वैज्ञानिक उपादानो के कारण भारत विश्व के अन्य देशों के घनिष्ठ संपर्क में आया तथा मानवतावादी विचारधारा के कारण विश्व का समस्त मानव समूह एक ही भावनात्मक धरातल पर चिंतन का विषय बना। भारतवर्ष सदैव से ही विश्व कल्याण के लिए प्रयत्नशील रहा और हमारे देश की यही भावना है समस्त सृष्टि के प्राणी सुखमय जीवनयापन करें। हमारे साहित्य में तो सदैव से ही विश्व बंधुत्व के गीत गाए जाते हैं। युगीन नाटकारों ने भी अपनी नाटय कृतियों में इसी भावना को व्यक्त किया है। विष्णु प्रभाकर का विचार है समान बंधुत्व की भावना के अभाव में मानव जीवन सुखमय और शांतिपूर्वक नहीं हो सकता तथा उन्होंने अपने नाटकों में विश्व कल्याण का भारतीय आदर्श प्रस्तुत कर प्रत्येक व्यक्ति को अन्य प्राणियों के कल्याण के लिए प्रोत्साहित करने का प्रयास किया। हत्या के बाद 'नाटक में विष्णु प्रभाकर ने आदित्य द्वारा वसुधैव कुटुंबकम की भावना को व्यक्त किया। 'आदित्य – कामरेड प्रमिला। व्यक्ति विश्व के परिवार का एक अंग मात्र है उसका जो कुछ भी है विश्व का है। कामरेड निखिल जहीर से इसी संदर्भ में कहता है स्त्री और पुरुष वृद्ध और अमीर का समूल विच्छेद कर दे। सारे विश्व को एक परिवार बना दे और संपत्ति इस परिवार की सिम्मिलत संपत्ति हो।' (18) 'समंदर' में अकबर का यह कथन विश्व बंधुत्व की ओर संकेत करता है मनु जब यह दुनिया वजूद में आई होगी तब सब तुम्हारे जैसे ही तो जातिहीन, गोत्रहीन, वर्गहीन रहे होंगे। हम सब हमेशा ऐसे ही क्यों न रहे। क्यो, ओढे हमने नकाब क्यों पहनी अपनी बनाई हथकड़ियां'।(19)

निष्कर्ष

हम यह कह सकते हैं विष्णु प्रभाकर पर गांधी जी का प्रभाव रहा उनकी नीतियों में अटूट आस्था रही। उन्हीं से प्रेरित होकर उन्होंने अपने नाटय साहित्य में मानवतावादी स्वर गुंजरित किए क्योंकि इन्हीं के द्वारा ही समाज, देश का कल्याण संभव है।

संदर्भ–सूची

1. श्री जे.सी. हेलनः सामाजिक विचारधारा का इतिहास, पृ. 281
2. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–5, पृ. 234
3. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–2, पृ. 162
4. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–1, पृ. 214
5. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–1, पृ. 280
6. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–2, पृ. 171
7. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–3, पृ. 315
8. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–5, पृ. 40
9. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–4, पृ. 126
10. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–1, पृ. 136
11. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–4, पृ. 408
12. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–1, पृ. 253
13. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–1, पृ. 350
14. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–3, पृ. 58
15. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–4, पृ. 109,110
16. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–6, पृ. 188
17. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–5, पृ. 389
18. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–4, पृ. 85
19. विष्णु प्रभाकरः सम्पूर्ण नाटकः भाग–1, पृ. 413